प्रवचन नं. ३७ गाथा-११ ता. १८-७-७८ मंगलवार अषाढ सुदी-१३ सं.२५०४

समयसार, ग्यारह गाथा। यह जैनशासन का सार है प्राण है। इसे समझे बिना दूसरा कितना ही समझे वह कोई वास्तविक ज्ञान नहीं। यह निश्चय और व्यवहार दोनों अच्छी तरह जानकर समझने योग्य है। इसे जानकर निश्चय का विषय जो ज्ञायक त्रिकाल वह आदरणीय है और व्यवहार का विषय भेद यह जानने लायक है - आदर ने लायक नहीं।

अब कहते हैं '**व्यवहारनय**' व्यवहारनय अर्थात ? कि जो भेद को विषय बनाये और भेद में भी गुण-गुणी का भेद अथवा राग को जानना - ऐसा भेद अथवा राग है - ऐसा जानना - ऐसा जो भेद उसे व्यवहारनय कहते हैं। सूक्ष्मबात है भाई !

व्यवहारनय उसकी व्याख्या इतनी, सभीव्यवहार... अध्यात्म के अंदर चारभेद किये है। यह अभूतार्थ होने से - ऐसा लिखा है। `**अभूतार्थ है**' - ऐसा नहीं कहा। `अभूतार्थ होने से' अविद्यमान, असत्य, अभूत अर्थ को प्रगट करता है।

अर्थात क्या ? सभी व्यवहारनय असत्य होने से, असत्य का अर्थ ? त्रिकाली वस्तु अपेक्षा वह नहीं। व्यवहारनय का विषय त्रिकाली वस्तु नहीं। उसका विषय वर्तमान भेद या राग का भेद, पर का, अपना गुण-गुणी का भेद जिसे यहाँ व्यवहारनय असत्यार्थ कहा है न। सभी अभूतार्थ होने से अर्थात झूठा होने से - ऐसा कहा यहाँ तो। अर्थात क्या ? जो आत्मा में राग जानने में आता है। पर्याय में है, वस्तु में नहीं... और वह राग है उसे असद्भूत कहकर... असद्भूत, वस्तु में नहीं, पर्याय में है। इसलिये उसको असद्भूत कहकर और उसके दो प्रकार। राग असद्भूत है, राग, इसके दो प्रकार। वस्तु में नहीं परंतु पर्याय में है। इसलिये उसको व्यवहार कहा और असद्भूत कहा।

अर्थात कि जो राग होता है पर्याय में है, उसे असद्भूत उपचारनय कहते हैं। क्यों ? (राग) है - ऐसा कहना यह उपचार है और उसे जाननेवाला ज्ञान यह असद्भूत व्यवहारनय है। आहाहा ! राग है पर्याय में परंतु असद्भूत है। वस्तु में नहीं, परंतु पर्याय में है। इस राग को जानने के दो प्रकार। (राग) है यह असद्भूत है और असद्भूत का यह विषय है। परंतु है उसको दो भेद। एक जानने में आता है बुद्धिपूर्वक का राग और एक जानने में नहीं आता फिर भी है - ऐसा ज्ञान करना। है यह जानने में आये उसे असद्भूत उपचार कहते हैं और राग है परंतु जानने में आता नहीं परंतु है इसलिये उसे असद्भूत अनुपचार कहते हैं।

ऐसा कहीं बही खाते में नहीं आता है। संप्रदाय में चलता न हो; दया पालो और व्रत पालो एवं भक्ति करो और बापू ! मूल चीज... वस्तु जो है आत्मा यह त्रिकाली तो ज्ञायकस्वरूप, चिदानंद सहजात्मस्वरूप, यह तो एक ही भूतार्थ है। विद्यमान पदार्थ है, कि जिसको विषय (ध्येय) बनाने से... जिसको विषय बनाने से सम्यग्दर्शन होता है। अर्थात परम सत्य वस्तु जो ध्रुव सामान्य ज्ञायक एकरूप भाव, उसे विषय बनाने से उसे ध्येय में लेने से, सम्यग्दर्शन होता है यह भूतार्थ त्रिकाल वस्तु है अर्थात इसका आश्रय करने से सत्यदर्शन होता है पर्याय में सम्यग्दर्शन...

परंतु पर्याय में जो राग है, यह त्रिकाली वस्तु में नहीं, इसलिये उसे असद्भूत कहकर और विद्यमान नहीं - ऐसा कहा, असत्यार्थ कहा। यह है ही नहीं, किस अपेक्षा से ? त्रिकाली में नहीं इसलिये वह नहीं इसप्रकार गौण करके नहीं कहा है। न हो, परंतु राग तो है, ज्ञानी को भी राग होता है। आहाहा ! ज्ञानी को भी

आत्मा ज्ञायकस्वरूप है पूर्ण आनंद अभेदरूप है - ऐसी द्रव्यदृष्टि ध्रुवदृष्टि होने पर भी ज्ञानी को राग तो होता है।

राग होता है उसे जानने के दो प्रकार... एक ज्ञान के ख्याल में आये - ऐसा राग, परंतु वस्तु में नहीं इसलिये `उपचरित असद्भूत व्यवहार' और ख्याल में न आये - ऐसा राग, स्वरूप में नहीं इसलिये असद्भूत परंतु ख्याल आता नहीं फिर भी है - ऐसा कहना `अनुपचार' असद्भूत है। अरे ऐसी बातें है। समझ में आया ?

व्यवहारनय चार प्रकार के (है)। जो नहीं - ऐसा यहाँ कहा है, नहीं अर्थात ? कि त्रिकाली में जो नहीं और त्रिकाली की अपेक्षा से, त्रिकाली अभेद की अपेक्षा से जब त्रिकाली को सत्य कहना है तब इस भेद को असत् कहकर गौण करके असत् कहकर उसे व्यवहारनय का विषय गिनाया है।

यह तो अलौकिक मंत्र है बापा ! आहाहा ! समझ में आया ? यह मूल रकम (पूंजी) की बात है यह तो। यह गाथा तो जैनदर्शन का प्राण है... जैसे प्राण बिना जीवन न रहे इसप्रकार इस गाथा के भान बिना जैनशासन दृष्टि में नहीं आये। आहाहा ! समझ में आया ? व्यवहारनय अर्थात कि राग को और भेद को विषय करनेवाला- ऐसा जो व्यवहारनय, समझ में आया ? व्यवहारनय अर्थात ? जो ज्ञान का अंश व्यवहार नय है। यह नय भेद को विषय बनाये - जाने और उसमें नहीं ऐसे राग को भी जाने - यह जाने उसके प्रकार फिर दो - भेद है उसके दो प्रकार।

जाने कि राग है, यह ख्याल में आये - ऐसा राग असद्भूत उपचार व्यवहार (क्योंकि) ख्याल में (राग) आया होने पर भी है उसे उपचार और उस समय उपयोग स्थूल है इसलिये राग जानने में आता है उसके साथ दूसरा राग है थोड़ा, वह जानने में आता नहीं। जानने में आता नहीं इसलिये उसे अनुपचार कहा और आत्मा में नहीं इसलिये असद्भूत कहा, असद्भूत अनुपचार जानने में नहीं आता उपयोगमें, है अवश्य, इसलिये उसको अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय कहा जाता है। पकड़ में आये इतना पकड़ना बापू यह तो...

(श्रोता :- अप्रमत्त की बात हुई यह तो) नहीं, नहीं अप्रमत्त की बात नहीं। यह तो राग होता है उस समय की बात है। छठवें गुणस्थान में भी राग होता है न ? सातमें में अबुद्धिपूर्वक राग है - ऐसा अभी यहाँ नहीं लेना। सातवें अबुद्धिपूर्वक छठवें में बुद्धिपूर्वक - ऐसा नहीं लेना। देवकीनंदन ने - ऐसा अर्थ किया था, देवकीनंदन थे पण्डित, इन्दौर के - ऐसा अर्थ किया है उन्होंने पंचाध्यायी का फिर यहाँ आये। सेठ के साथ कहा कि यह अर्थ तो तुम्हारा गलत है। अबुद्धिपूर्वक सातमें और बुद्धिपूर्वक छठवें - ऐसा नहीं - यहाँ बात ऐसी नहीं, यहाँ कहा, परंतु व्यक्ति सरल थे नरम

व्यक्ति थे, गुजर गये बिचारे।

उन्होंने पंचाध्यायी में - ऐसा अर्थ किया कि अबुद्धिपूर्वक सातमें और बुद्धिपूर्वक छठवें अर्थात सातवें है वह अबुद्धिपूर्वक है यह अनुपचरित असद्भूत और यहाँ बुद्धिपूर्वक है उपचार असद्भूत। वह अनुपचरित असद्भूत और उपचरित असद्भूत, कहा - ऐसा नहीं, परंतु व्यक्ति बहुत सरल थे। उनका यहाँ पंचाध्यायी है, उसमें - ऐसा अर्थ किया है पर कहा कि यह तुम्हारी भूल है। (तब उन्होंने कहा) हम तो पण्डित है, समझ में नहीं आये, फिर भी लिख डालते हैं, कहा - ऐसा नहीं चले यह तो वीतराग मार्ग है। बहुत सरल (थे)।

सुनो, यहाँ तो छठवें गुणस्थान में जो राग है उसके दो प्रकार, एक बुद्धिपूर्वक और (दूसरा) अबुद्धिपूर्वक। यहाँ छठवें बुद्धिपूर्वक एवं सातवें में अबुद्धिपूर्वक है यह - यहाँ नहीं लेना। सातवें में अकेला अबुद्धिपूर्वक है यह यहाँ नहीं लेना, यहाँ तो। यह गोम्मटसार में भी है।

जो राग है समकिति को, ज्ञानी को, मुनि को, परंतु यह राग है - ऐसा जो है उसे जानना, बुद्धिपूर्वक है ख्याल में आता उसे, उसे यहाँ बुद्धिपूर्वक असद्भूत उपचारनय कहा है और उसको न उसको जो राग अंदर है यह ख्याल में आता नहीं, परंतु है अवश्य, उपयोग स्थूल है, अतः - ऐसा अबुद्धिपूर्वक (राग) है और ख्याल में नहीं आता, वह उसी जीव को जो ख्याल में नहीं आता उस जीव के, उस राग को, अनुपचार असद्भूत व्यवहारनय, कहते हैं भैया... सूक्ष्मबात है यह। आहाहा ! धीरज से कहते हैं।

राग है यह स्वरूप में नहीं। इसलिये उसे असद्भूत कहा अब असद्भूत के दो प्रकार कि एक जानने में आता है उसे असद्भूत उपचार कहते है और उसी क्षण में, उसी समय में जो राग का भाग है अंदर, यह जानने में आता नहीं, इसलिये उसे असद्भूत अनुपचार (व्यवहार) नय कहा जाता है, बुद्धिपूर्वक (राग) छठवें और उपचरित असद्भूत व्यवहार कहते हैं और सातवें में अबुद्धिपूर्वक है इसलिये उसे असद्भूत अनुपचार कहते हैं - यह बात यहाँ नहीं। बाबूलालजी ! समझ में आये - ऐसा है, धीरज से हाँ ! बहुत सूक्ष्म विषय बापू ! आहा ! वीतराग मार्ग परमेश्वर त्रिलोकनाथ का। आहाहा !

फिर से ! हमारे बाबूलालजी कहते हैं न फिर से लो ! यह ज्यादा विस्तार किया है न ? यह आत्मा जो है यह त्रिकाली भूतार्थ ज्ञायकभाव है। उसे भूतार्थ कहें, विद्यमान चीज सत् चीज, सत् साहिबो, सत् साहेब प्रभु। आहाहा ! और उसकी पर्याय में भेद से उसका ज्ञान करना कि राग है यह हमारी पर्याय में है बुद्धिपूर्वक

का ख्यालवाला राग, उसे असद्भूत उपचार कहते हैं और उसे ख्याल में नहीं आता - ऐसा जो राग उसे असद्भूत अनुपचार व्यवहार कहते हैं। कहो समझ में आता है कुछ ?

और सद्भूत के दो प्रकार :- कि जो ज्ञान अपनी पर्याय में है परंतु यह ज्ञान राग को जानता है - ऐसा कहना... वह है यह तो मात्र राग है - ऐसा जानना और यहाँ तो ज्ञान की पर्याय राग को इसप्रकार जाने परंतु पर्याय है अपने में। यह अपनी पर्याय राग को जाने इसप्रकार पर्याय सद्भूत है इसलिये अपने में है सद्भूत, परंतु उसे जानना कहना उपचार, अर्थात सद्भूत उपचार हुआ व्यवहार।

धीरे से समझना भाई ! आहा !... यह तो जैनदर्शन का प्राण है ग्यारहवीं गाथा तो। यह कैलाशचन्द्रजी ने लिखा था एक बार... अखबार में कि ११ वीं गाथा वीतराग परमेश्वर (के) मार्ग का प्राण है, इसके बिना जीवन चैतन्य कैसा है यह उसे नहीं जान सके। आहा...हा !

(कहते हैं कि) अर्थात व्यवहारनय सभी, सभी अर्थात चार जो राग है, वह पर्याय में है, वस्तु में नहीं। परंतु यह पर्याय में है यह तो व्यवहार हो गया और पर है अतः असद्भूत हो गया। यह असद्भूत व्यवहार... उसके दो प्रकार, जो ख्याल में आये ऐसे राग को `असद्भूत उपचार' कहते हैं और उसी समय का राग, ख्याल में नहीं आता। उपयोग स्थूल होने से, उस राग को अबुद्धिपूर्वक कहा है उस जीव को उसे अनुपचार (कहा) ख्याल में आता नहीं, परंतु है, इसलिये अनुपचार असद्भूत व्यवहारनय उसे कहा जाता है। यह वस्तु (व्यवहार) सभी अभूतार्थ है, अभूतार्थ अर्थात वस्तु में नहीं, इसलिये उसे गौण करके `नहीं' - ऐसा कहा, असत्य है। है तो अवश्य, राग है उसके दो प्रकार है, उसे बुद्धिपूर्वक का राग वह व्यवहार असद्भूत उपचार और अबुद्धिपूर्वक का राग वह व्यवहार अनुपचरित असद्भूत व्यवहार `है', (परंतु) यहाँ कहते हैं कि **`अभूतार्थ होने से'**

क्या कहा ? नहीं अर्थात गौण करके `नहीं' - ऐसा कहा है। बिलकुल नहीं तब तो व्यवहारनय का विषय ही नहीं (रहेगा) वर्तमान में। समझ में आया ? गुणवंतभाई ! है न पुस्तक सामने ? आहाहाहा ! - ऐसा मार्ग है।

भगवान आत्मा एक समय में सत्यार्थस्वरूप, पूर्णस्वरूप, अभेदस्वरूप, सामान्यस्वरूप, सत्यार्थवस्तु त्रिकाल, वह तो शुद्धनय का विषय है, इसलिये इस त्रिकाली को शुद्धनय भी कहा जाता है और यहाँ (साधक को) जो राग उसमें (पर्याय में) है, अभी साधक है इसकी बात है न यहाँ ! नय का ज्ञान तो श्रुतज्ञानी को होता है न ? केवली की यह बात नहीं कहीं, अर्थात श्रुतज्ञान से जिसने ज्ञायक को जाना अनुभवा यह

तो निश्चय, परंतु इस श्रुतज्ञान में अभी यह साथ में जो राग है यह ख्याल में आये ऐसे राग को `असद्भूत उपचार व्यवहार' कहते हैं और ख्याल में नहीं आये उसे `असद्भूत अनुपचार' कहते हैं।

परंतु इसमें है उसे `जानना' यहाँ तो - ऐसा कहा कि सभी अभूतार्थ-अविद्यमान `नहीं' उसे कहते हैं उसका अर्थ ? कि त्रिकाली सत् की अपेक्षा यह वस्तु नहीं, पर्याय की अपेक्षा इसमें है। आहाहा ! त्रिकाली को जब मुख्य कहकर निश्चय कहते, तब भेद को गौण करके `नहीं' - ऐसा कहते हैं, गौण कहकर अभूतार्थ होने से, अभूतार्थ होने से, असत्यार्थ होने से झूठ होने से। आहाहाहा ! शशिभाई ! - ऐसा विषय है। यह लोग। एकदम समझे बिना। बाहर की यह दया, यह व्रत, और यह तो सभी अज्ञान है मिथ्यात्व।

जो राग, स्वरूप में नहीं उस राग को करना और मानना यह तो मिथ्यात्व है। करना और मानना - ऐसा... इसप्रकार स्वरूप का ज्ञान होने के बाद, राग हो उसे `असत्यार्थ होने से' - ऐसा कहा क्योंकि कायमी वस्तु की दृष्टि की अपेक्षा से व्यवहार का विषय जो नहीं, अविद्यमान है, विद्यमान तो त्रिकाली चीज है वह है। आहाहा !

वस्तु सम्यग्दर्शन का विषय है, यह तो शुद्धनय का विषय वह सम्यग्दर्शन का विषय त्रिकाली, त्रिकाली भगवान, पूर्णानंद का नाथ प्रभु ध्रुव (आत्मा) यह सत्यार्थ है। और उसका आश्रय करने से सम्यग्दर्शन होता है। अब जब पर्याय में भी अभी राग है, तब उस राग को क्या कहना ? कि उसको यहाँ त्रिकाली को सत्य कहा है। इस अपेक्षा से राग है, उसे असत्य कहा है, है ?

उस त्रिकाली को जब सत्य कहा तब इस (पर्याय में राग) है उसे असत् कहा है परंतु नहीं - ऐसा नहीं, समझ में आया ? इस राग के दो प्रकार समझना, यह असद्भूत व्यवहार के उपचार - अनुपचार दो प्रकार हुये। अब दो भेद दूसरे सद्भूत के, यह भी - अभूतार्थ होने से - यहाँ कहा है। व्यवहारनय का असद्भूत का विषय यह भी `नहीं' - अविद्यमान है। - ऐसा कहा, यह किस अपेक्षा से ? त्रिकाल सत् को मुख्य करके जब निश्चय है - ऐसा कहा तब इस पर्याय को गौण करके `नहीं' - ऐसा कहा है।

अब इस सद्भूत के भी दो प्रकार, ***कि जो ज्ञान वर्तमान पर्याय, राग को जानता है - ऐसा कहना - जानता है - ऐसा कहना यह सद्भूत उपचार (है) यह भी त्रिकाल की अपेक्षा से `अविद्यमान' है*** अरे ! ऐसी बातें, समझ में आया ? वर्तमान की अपेक्षा से तो सत् है। न हो तब तो वेदांत हो जाये है। पर्याय नहीं-राग नहीं... यह तो

वीतराग सर्वज्ञ का शासन है। आहाहा !

अर्थात कि सद्भूत व्यवहार अर्थात... उसके दो प्रकार, कि जो ज्ञान अपने में (है) अब पर्याय की बात है वर्तमान में। ज्ञान की पर्याय अपने में है इसलिये सद्भूत, परंतु यह ज्ञान राग को जानता है उसका नाम उपचार, यह सद्भूत उपचार और विद्यमान है यहाँ त्रिकाली को विद्यमान ग्रहणकर के इस (ज्ञान पर्याय) विद्यमान को गौण करके अविद्यमान है। - ऐसा कहा है। आहाहाहा ! कहो छोटा भाई ! किसी दिन यह विचार किया न हो इसमें। आहाहा ! - ऐसा मार्ग वीतराग का आहा... कहा श्री वीतराग, त्रिलोकनाथ परमात्मा (यह) दिव्यध्वनि में कहा है। प्रभु तुम (कैसे हो) हम यहाँ कहते हैं क्योंकि पाठ - ऐसा है न ? `अभूतार्थत्वात-अभूतार्थम्' झूठा है इसलिये झूठ अर्थ को प्रगट करता है। - ऐसा कहा। पाठ तो - ऐसा है संस्कृत अभूतार्थ... अभूतार्थत्वात् अर्थात `नहीं' इसके कारण असत् कहा है। पाठ तो - ऐसा है। इसका अर्थ इतना... कि वस्तु की (जो) त्रिकाली सत्य वस्तु प्रभु, उसकी दृष्टि का विषय जो त्रिकाली सत् है, और व्यवहार का विषय, उसे गौण करके असत्यार्थ होने से, असत्य अर्थ को प्रगट करता है - ऐसा कहा है और शुद्धनय सत्यार्थ होने से, एक सत्य को ही प्रगट करता है। आहाहा ! - ऐसा काम !

फिर से, सभी व्यवहारनय अभूतार्थ होने से - ऐसा शब्द है न ? सीधा अभूतार्थ - ऐसा नहीं लिया। `अभूतार्थत्वात् अभूतम्अर्थम्' प्रगट करता है झूठा होने से असत्य अर्थ को प्रगट करता है - ऐसा कहा। समझ में आया ? आहाहा !

अर्थात ? कि त्रिकाली वस्तु जो ज्ञायक पूर्णप्रभु उसने जब सत्यार्थ कहा और यही सम्यग्दर्शन का विषय अर्थात शुद्धनय का विषय कहा, उसे जब सत्य कहा, तब पर्याय का भेद है कि जो ज्ञान राग को जाने, यह ज्ञान की पर्याय है, परंतु यह राग को जानती - ऐसा कहना, यह सद्भूत उपचार है। यह अभूतार्थ होने से नहीं - ऐसा कहा, है तो अवश्य परंतु त्रिकाली की अपेक्षा से उसे असत्य कहकर, असत्य अर्थ को प्रगट करता है। आहाहा ! राग को जानना - ऐसा जो ज्ञान, ज्ञान राग को जानता यह असत् अर्थ को प्रगट करता है। आहाहाहा ! समझ में आये इतना समझना प्रभु यह तो। वीतराग मार्ग का गहरा-गहरा गंभीर भाव है। भाई ! आहाहा !

धीरे... धीरे सभी कहा जायेगा हाँ ! एकसाथ छोड़ नहीं देते यह। हमारे बाबूलाल कहते थे न कि फिर से लो। भाई ! यह तो दो-चार बार लें फिर भी अंत न आये। आहाहा ! व्यवहारनय अर्थात ? भेद को और उसमें नहीं - ऐसे राग को जाने, उसे व्यवहारनय कहते हैं। यह संक्षिप्त भाषा, व्यवहारनय अर्थात अभेदमें से भेद करना और उसमें नहीं ऐसे राग को इन दोनों को जानना, यह नहीं त्रिकाली

की अपेक्षा वह नहीं। गौण करके यह नहीं - ऐसा कहकर यह अभूतार्थ होने से विद्यमान वस्तु को वह बताता नहीं। विद्यमान वस्तु को प्रगट करता नहीं। आहाहाहा ! विद्यमान वस्तु को प्रगट करता नहीं यदि फिर व्यवहारनय का विषय विद्यमान नहीं? नय है उसका विषय जो हो नहीं तब नय न हो। परंतु यहाँ त्रिकाली को जब सत्यार्थ कहकर मुख्य कहकर निश्चय कहा तब व्यवहाररूप भेदों का उसकी पर्याय में ज्ञान है यह ज्ञान राग को जानता है। - ऐसा होने पर भी और दूसरी बात, `यह ज्ञान, सो आत्मा' अब - ऐसा लिया है यह भी सद्भूत अनुपचार हुआ `ज्ञान सो आत्मा' ! उसे भी अभूतार्थ अर्थात कि विद्यमान वस्तु नहीं उसे वह प्रगट करती है भेद को, उसे गौण करके, नहीं - ऐसा कहने में आया है। आहाहाहा !

रात को प्रश्न करना, नहीं समझ में आया, परंतु कोई प्रश्न तो करता नहीं (श्रोता :- हमारी भूल आप जान जाओगे) इसमें कहाँ तकलीफ है। भूल तो ... समझ के लिये तो... चाहे जैसा प्रश्न हो सके। आहाहा ! और यह तो खास चीज है। आहाहाहा !

अर्थात व्यवहार के चार प्रकार हुये एक बुद्धिपूर्वक हुआ राग, जो ज्ञात होता यह असद्भूत उपचार उसीसमय (जो) राग ज्ञात नहीं होता उसीसमय का उसका ही स्वयं उसे असद्भूत अनुपचार और यहाँ ***ज्ञान की पर्याय अपने में है परंतु यहाँ राग को जाननेवाला ज्ञान लेकिन यह तो (स्वयं की) पर्याय है, पर्याय है अतः सद्भूत व्यवहार हो गया और यह राग को जानता है यह सद्भूत उपचार हो गया। पर्याय है इसलिये व्यवहार, परंतु अपने में है अतः सद्भूत।*** समझ में आया ?

और यह ज्ञान राग को जानता है - ऐसा कहना। यह जानता तो है ज्ञान ज्ञान को; परंतु यह ज्ञान राग को जानता है - ऐसा कहना यह सद्भूत उपचार व्यवहारनय नहीं उसे प्रगट करता है - ऐसा जो कहा वह गौण कहकर, नहीं - ऐसा कहा है, समझ में आया कुछ ?

और ज्ञान की पर्याय इसमें होने पर भी, यह तो व्यवहार है सद्भूत व्यवहार है। ***यह राग को जानता है - ऐसा कहना यह उपचार है, वास्तव में तो ज्ञान की पर्याय ज्ञान को जानती है। ज्ञान की पर्याय ज्ञान को जानती है, फिर भी यह ज्ञान की पर्याय राग को जानती है - ऐसा कहना यह अपनी पर्याय है अतः सद्भूत, वह (राग को) जानती है - ऐसा कहना यह उपचार एवं पर्याय है अतः व्यवहार।*** आहाहा ! वह यहाँ असद्भूत होने से असद्भूत अर्थ को प्रगट करती है अर्थात कि त्रिकाली वस्तु में जो नहीं और पर्याय में है, परंतु पर्याय को गौण करके उसका आश्रय छुड़ाने वह नहीं इसप्रकार गौण करके कहा सर्वथा नहीं - ऐसा नहीं। समझ

में आया कुछ...?

(श्रोता :- ***द्रव्य में तो सर्वथा नहीं ? (उत्तर) द्रव्य में इस प्रकार द्रव्य में यह जो उसकी यह द्रव्य वस्तु है वह अभेद में नहीं। भेद में है इसके द्रव्य के भेद में, परंतु अभेद में नहीं। अभेद में नहीं इसलिये उसे व्यवहार कहा। भेद करना यह व्यवहार है, ज्ञान की पर्याय - ऐसा कहना वह भेद व्यवहार हो गया; पर्याय जो कहना यही व्यवहार हो गया; और यह पर्याय राग को जानती है - ऐसा कहना यह सद्भूत उपचार व्यवहार हो गया।*** आहाहा !

अब चौथा, `ज्ञान सो आत्मा' इतना भेद हुआ न ? यह भी व्यवहार है। क्योंकि ज्ञान सो आत्मा यह भेद हो गया। भेद को गौण करके, असत्य अर्थ को प्रगट करता है। यह सद्भूत अनुपचारनय है ज्ञान सो आत्मा यह सद्भूत और अनुपचार, (क्योंकि) उसमें हैं। सद्भूत अनुपचार अर्थात है - यह ज्ञान सो आत्मा - ऐसा जान सकते है परंतु इतना भेद हुआ और उसमें पर्याय तो सद्भूत है। परंतु उस राग को जानना - ऐसा कहना यह उपचार है और इसें (ज्ञान) जानना यह कहना निश्चय अनुपचार है। आहाहा !

- ऐसा जो `ज्ञान सो आत्मा' - ऐसा जो भेद यह सद्भूत अनुपचार। यह व्यवहारनय विद्यमान वस्तु को प्रगट करता नहीं। असत् को प्रगट करता है अर्थात कि त्रिकाली वस्तु में - ऐसा (भी) भेद नहीं, इस भेद को गौण करके, भेद नहीं, और व्यवहारनय का विषय असत्य को प्रगट करता है - ऐसा कहा जाता है। शकुनलालजी ! इसमें तो पण्डिताई पड़ी रहेगी सब, आहाहाहा ! कल तो कहा था, यह तो फिर से... सेंत्तीस सेंत्तीस मिनट तो हो गये।

व्यवहारनय सभी अर्थात यह चारों (प्रकार का) अभूतार्थ अर्थात असत्य होने से असत्य का अर्थ गौण करके असत्य होने से, और त्रिकाली को मुख्य करके सत्यार्थ होने से... आहाहा ! क्योंकि त्रिकाली जो सत्य वस्तु है पूरण ब्रह्म प्रभु, उसका आश्रय करने से सम्यग्दर्शन होता है। इसलिये यह भूतार्थ वस्तु वही त्रिकाली है, कि जिसके आश्रय से सम्यग्दर्शन होता है, और यह जो भेद है उसके आश्रय से तो राग होता है। भेद के आश्रय से विकल्प उठते हैं इसलिये उस भेद को, राग के भेद को और गुण-गुणी के भेद ने भी, असत्यार्थ कहा, असत्य अर्थ को प्रगट करता है अर्थात त्रिकाली सत्य को प्रगट करता नहीं, भेद को प्रगट करता है इस अभेद में भेद नहीं, इसलिये उसे गौण करके व्यवहारनय (कहा) असत्य को प्रगट करता है।

(श्रोता :- प्रगट करता है इसलिये ?) बताता है। है तो असत्य आहा... हाँ अभी वह शब्द आया नहीं परंतु पहले यह अर्थ किया। देखो अब आयेगा। व्यवहार सभी

अर्थात चारों अभूतार्थ अर्थात झूठा होने से। (श्रोता : है उसे झूठा क्यों कहा) यह तो कहा न ! गौण कहकर झूठा कहा है, कारण कि दृष्टि का विषय उसे बताना और दृष्टि का विषय वही सत्य है और वही दृष्टि स्थाई रखनी चाहिए। इस अपेक्षा से भेद की दृष्टि नहीं रखना चाहिए, फिर भी यह है - ऐसा ज्ञान करना चाहिए। है - ऐसा ज्ञान भी यहाँ गौण कहकर नहीं - ऐसा कहा है। आहाहाहा ! है कि नहीं इसमें पाठ ?

आलाप पद्धति में भाई दूसरा कहा है, वह आगम पद्धति का है, आगम की भाषा है यह अध्यात्म की भाषा है।

यहाँ तो प्रभु ! आत्मा परमात्मा स्वरूप त्रिकाली एकरूप वस्तु है, उसीको ही यहाँ सत्यार्थ और भूतार्थ और विद्यमान पदार्थ उसे कहने में आया है, और उसकी पर्याय और उसमें हुआ राग उसे गौण करके `नहीं' कहकर व्यवहार का विषय वह असत्य अर्थ को प्रगट करता है। आहाहा ! क्योंकि जो त्रिकाली नहीं, वर्तमान है उसका आश्रय करने जैसा नहीं, इसलिये उसे गौण करके, व्यवहार को असत्यार्थ कहा है। - ऐसा है बापू ! आहाहाहा !

(श्रोता :- व्यवहार को असत्यार्थ कहेंगे तो संसार ही नहीं रहेगा) वह वस्तु में है नहीं और त्रिकाली को मुख्य करने के लिये उसे सत्य करने के लिये त्रिकाली को मुख्य करके सत्य बताने में आया, उसे गौण करके, असत्य कहकर नहीं - ऐसा कहा है। आहाहा ! हसमुखभाई आया है, भाई भी आये है न जयंतीभाई !

ऐसी सूक्ष्मबातें है यह, धीरे-धीरे समझ में आये - ऐसा है हाँ ! धीमे... धीमे... ख्याल रखो न। आहाहा ! यह तो भगवान, समझनेवालों को समझाते है न ? कि उस राग को समझाते है ? हाँ ? शरीर को समझातें है ? वह समझनेवाला है उसे समझाते है। आहाहा !

भाई ! तुम इसप्रकार समझो, यह त्रिकाली प्रभु है, आहाहा ! उसे हम मुख्य कहकर, सत्य वही है - ऐसा उसे निश्चय कहा है। और पर्याय में सद्भूत उसीकी पर्याय होनेपर भी ज्ञान और आत्मा इसप्रकार अनुपचार भेद किया - ऐसा है तो अवश्य। परंतु भेद किया इसलिये इसे गौण कहकर `ज्ञान सो आत्मा' यह असत् अर्थ को प्रगट करता है - ऐसा कहा। आहाहाहाहा !

कहो धीरूभाई ? वहाँ था कही वहाँ ? मंदिर बनाओ और यह करो एवं ढिकाना करो और आहाहाहा ! तीनलोक का नाथ बादशाह पूर्णानन्द का नाथ बादशाह अन्दर बिराजता है, वह बादशाह है, वही सत्य है - ऐसा कहकर उसमें पर्याय का और राग का भेद पड़े उसे (असत् कहा) है तो अवश्य, उसे गौण कहकर, व्यवहारनय

असत्य को प्रगट करता है - ऐसा कहने में आया है `नहीं' है उसे प्रगट करता है - ऐसा नहीं आहाहा ! समझ में आया ?

व्यवहारनय का विषय ही नहीं तब नय क्यों ? नय तो विषयी है और सामने उसका विषय हो तब व्यवहारनय होता है। समझ में आया ? निश्चयनय है आहाहा ! वह भी विषयी है उसका विषय न हो तो विषयी ही कैसा ? आहाहा ! निश्चय का विषय तो त्रिकाली ज्ञायकभाव है। आहाहा ! और व्यवहार का विषय वर्तमान पर्याय राग और भेद है, विषय उसका हो तो नय कहा जाता है, परंतु उस विषय को गौण कहकर वह असत्य को (प्रगट करता) त्रिकाली को प्रगट करता नहीं भेद को और राग को प्रगट करता (है) अतः गौण करके असत्य अर्थ को प्रगट करता है - ऐसा कहा है। आहाहाहा ! कहो देवीलालजी ! ऐसी बातें हैं। अभी तो यह प्रथम पंक्ति का अर्थ चलता है। आ आहा...हा !

अरे ! भगवान अंदर प्रभु ! जो ज्ञान का बिम्ब, चैतन्य बिम्ब प्रभु तुम हो न? आहाहा ! अकेले चैतन्य के प्रकाश का नूर का तेज सामान्य अभेदरूप वस्तु तुम हो, उसे सत्य कहकर, वही विद्यमान पदार्थ है - ऐसा कहकर, उस विषय को निश्चयनय का विषय बताया, और पर्याय में पर्याय अंश है वह भेद है और राग भी है, उसमें नहीं उसका विषय व्यवहार नय है, वह व्यवहारनय उसे जानता है यह तो बराबर है परंतु यहाँ इसे गौण कहकर व्यवहार का विषय नहीं - ऐसा कहने में आया है। आहाहा ! - ऐसा मार्ग ! दिगम्बर जैनदर्शन के अलावा सुनने मिले - ऐसा नहीं बापू ! आहाहा ! सनातन जैनदर्शन तीन लोक के नाथ का कहा हुआ, आहाहा ! परस्पर विरोध रहित - ऐसा जो जैनशासन है परंतु इसे समझने को बहुत प्रयत्न चाहिए, बहुत निवृत्ति लेकर पुरुषार्थ से उसे समझना चाहिए।

व्यवहारनय सभी अर्थात चारों अभूतार्थ चाहिए। झूठा होने से, कहे व्यवहार झूठा तो (क्या) पर्याय नहीं ? (न हो तों) वेदांत हो जाये इसमें से निकालते है यह... वह नाथूरामप्रेमी - ऐसा कहते थे कि यह तो वेदांत के ढाले में ढाला है, कुन्दकुन्दाचार्य ने समयसार को।

अरे भगवान... वहाँ आगे तो कहा कि पर्याय है, द्रव्य की है ***पर से भिन्न, अपने में है और पर्याय द्रव्य से भिन्न अपने में है - ऐसा सभी सिद्ध किया है। यह वेदांत में कहाँ था ? आहाहाहा ! वह कहते यह, इस पर्याय को अभूत कहा है न ? पर्याय वह नहीं - ऐसा कहा यहाँ तो ! द्रव्य तो है पर्याय नहीं, असत्य है, अर्थात कि नहीं। - ऐसा कहा था न ! बापू ! किस अपेक्षा से कहा ? (श्रोता :- अपेक्षा से कहा) उसकी अपेक्षा... उसको गौण करके उसका लक्ष्य छुड़ाने, वह नहीं***

- ऐसा कहा और जिसका लक्ष्य करना है उसे मुख्य करके वही सत्य है ऐसी दृष्टि कराई है समझ में आया ?

(श्रोता :- गौण है उसे गौण कराया है ?) परंतु हो उसे गौण करें न ? न हो उसे गौण क्या करना ? कुछ वस्तु ही नहीं उसे गौण (कैसे) करें ? गौण किसे करें ? तलहटी गौण करके ऊपर चढ़ना, परंतु... तलहटी है कि नहीं ? गौणकर छोडना, वहाँ खड़े नहीं रहना है ऊपर जाना है। तलहटी को गौण करके जहाँ जाना है उसे मुख्य करके वह है - ऐसा कहा। इसप्रकार व्यवहार तलहटी है, और असत्य कहकर वहाँ से हटकर जाना है अंदर में। आहा ! समझ में आया कुछ ? इसलिये तलहटी को जैसे असत् कहा, परंतु तलहटी है कि नहीं ? (श्रोता :- है) फिर तलहटी छोड़ कर फिर जाते हैं न अंदर ! है उसे छोड़कर जाते हैं कि नहीं ? इसप्रकार व्यवहारनय का विषय है उसे छोड़कर निश्चयनय की दृष्टि करते हैं। आहाहाहाहा !

(श्रोता :- सत्ता तो है परंतु दृष्टि में गौण है।

उत्तर :- यहाँ तो मुख्य गौण से कथन है वह अंदर भावार्थ में आयेगा, परंतु उसे गौण किया इसलिये अभाव ही मान लेना... मिथ्यादृष्टि है। (क्या) पर्याय नहीं ? पर्याय में राग नहीं ? तब तो शुद्धचैतन्य मूर्ति स्वरूप केवलज्ञानी परमात्मा होना चाहिए। समझ में आया ? राग पर्याय में नहीं ? तब तो केवलज्ञान हो गया ! यह तो साधक जीव की बात है। आहाहाहाहा !

जिसने आत्मा एक समय में पूर्णानंद का नाथ प्रभु ध्रुवस्वरूप जिसे अतीन्द्रिय स्वाद आया है। आहाहाहा ! वह अतीन्द्रिय का स्वाद लेने के लिये अतीन्द्रिय एकरूप पदार्थ वह सत्य है, इसलिये सत्य को मिलाओ, सत्य को प्राप्त करो और यह वस्तु तुम्हें आश्रय करने योग्य नहीं, इसलिये उसे गौण करके नहीं - ऐसा कहा है। इसलिये वहाँ से हट जाओ। आहाहाहाहा ! समझ में आया ?

समझ में आये इतना समझना भाई ! भगवान के मार्ग की गहनता का पार नहीं। आहाहा ! उसकी सूक्ष्मता उसकी गंभीरता। ओहोहोहो !

व्यवहार-निश्चय की भी गंभीरता बापू अपूर्व है। आहाहा ! बारहवीं (गाथा) में तो कहेंगे- ऐसा कहेंगे कि व्यवहारनय जाना हुआ प्रयोजनवान है। न हो उसे जाना हुआ कहलाये ? इसमें निश्चयनय को मुख्य करके व्यवहार को गौण करके, नहीं (है) - ऐसा कहा है। बारहवीं गाथा में आयेगा कि उसे भान हुआ कि आत्मा अखण्ड भूतार्थ है, अब पर्याय में अपूर्णता और राग है कि नहीं ? है... जो व्यवहार न हो तो वीतराग केवली हो जायें।

`तब जाना हुआ' जानना तो उसका विषय है नहीं ? जाना हुआ प्रयोजनवान है ? व्यवहार जाना हुआ प्रयोजनवान है। जानना चाहिए, आदर करने को प्रयोजनवान है - ऐसा नहीं। आहाहाहा !

सभी व्यवहार अर्थात यहाँ अध्यात्म के चार बोल लेना। अभूतार्थ अर्थात असत्य होने से, पर्याय और पर्याय के भेदों में रागादिक झूठा होने से, अविद्यमान, नहीं उसे असत्य और अभूत और नहीं उसे - ऐसा नहीं उसके अर्थ को प्रगट करता है, नहीं उस भाव को प्रगट करता है। आहाहा !

एक पंक्ति में कितना भरा है। आहाहा ! यह संत एवं केवली उसकी परिभाषा करते होंगे। आहाहाहाहा ! मुनि कहो तीन कषायों का अभाव हुआ और प्रचुर आनंद की भूमिका जिसे प्रगट हुई है। आहाहा ! वह शास्त्रों का अर्थ कैसा करते होंगे। आहाहा ! संत, वीतरागी मुनि दिगम्बर उनकी क्या बात कहें बापू ! क्योंकि यह तो उनके द्वारा कहा हुआ कथन है। आहाहा !

यह अभूतार्थ होने से विद्यमान नहीं। व्यवहारनय ही नहीं अर्थात व्यवहार का विषय ही नहीं, गौण करके नहीं, असत्य और अभूत अर्थात नहीं - ऐसे अर्थ को, नहीं ऐसे भाव को प्रगट करता है। आहाहा ! यह एकनय के विषय की व्याख्या हुई। लो यह होने आया एक घण्टा पांच मिनट है, छह मिनट। आहाहा !

गजब बात प्रभु तुम्हारी। सर्वज्ञ परमेश्वर उनके कथन धर्म के और धर्म विरुद्ध के दोनों कथन अलौकिक है। ऐसी बात परमसत्य कान में आना बापू ! यह भी भाग्यशाली हो उसे मिले ! समझे वह तो निहाल हो जाये। आहाहा !

अब शुद्धनय एक ही होने से, उसमें सभी था न ? व्यवहारनय सभी था; बहुत थे अर्थात चार बोल। यह तो एक ही प्रकार है। आहाहाहा ! दूसरे शास्त्रों में शुद्ध की व्याख्या आती है शुद्धनय-अशुद्धनय ऐसा भेद आता है, परंतु इन सभी भेदों की अपेक्षा परसमय की मुख्यात बताना... यहाँ तो स्वसमय की मुख्यता बताना है। आहाहाहा ! महाप्रभु ! एक समय में प्रभु ! शुद्धनय यह एक ही भूतार्थ होने से है। शुद्धनय एक ही इसप्रकार संस्कृत में है। आहाहा ! `शुद्धनय एक एव भूतार्थत्वात्' `भूतार्थ' `होने से' यहाँ फिर न्याय... वह अभूतार्थ `होने से' था। आहाहाहा !

प्रभु का मार्ग सूक्ष्म बापू भाई ! लोकों के हाथ आया नहीं संप्रदाय (श्वेताम्बर) में तो यह बात सुनने मिलती नहीं। आहाहा ! स्थानकवासी श्वेताम्बर में तो यह बात ही नहीं। दिगम्बरों में बात है परंतु उसके अर्थ को... अपनी कल्पना से अर्थ करके, व्यवहार के विषय में चले जाते है। आहाहा !

व्रत और तप और भक्ति एवं पूजा को करते-करते कल्याण हो जायेगा। जिसे

यहाँ असत्य कहा... उसे उससे सत्य मिलेगा... - ऐसा चलाए, बापू ! नुकसान होगा भाई ! तुम्हें विपरीत भाव के फल में, वेदन कठिन होगा प्रभु ! वर्तमान विपरीतभाव है यह भी दुःखरूप है और उसका फल भी भविष्य में भाई तुम्हें दुःखरूप है बापू ! यह बात तुम्हारे तिरस्कार के लिये नहीं प्रभु ! परंतु विपरीत श्रद्धा और विपरीत ज्ञान, उसका भविष्य में प्रभु कठिन दुःख है। आहाहाहा !

जिसके फल में नरक और निगोद बापू सामने कोई देखनेवाला नहीं मिले, आहाहा ! यह वहाँ परिचित कोई व्यक्ति नहीं होगा। अन्जान क्षेत्र में अन्जान शरीर में जाना बापा ! आहाहा ! इस मिथ्याश्रद्धा के फल में यह स्थिति अनंतबार खड़ी हुई है। आहा...हा !

भाई तुम्हारी सुननेवाला कोई नहीं था वहाँ हो ! चीखो चिल्लाओ और दुःखी हो। यह अमेरिका में.... सुनते है न ? इस प्रकार गायों को खड़ी रखें, गावों में खाने के लिये, सैंकड़ों गाय एक साथ माथे पर आरा पड़े (चले) मशीन होती मशीन, सिर इसप्रकार गिर जाय। कसाईखाना है न अमेरिका में। आहाहा ! भाई क्या होगा बापू ! राग की एकता और शरीर की एकता बुद्धि में बापा ! उसे दुःख यह काटने (का) दुःख नहीं उसे एकत्व बुद्धि का दुःख है। एकता बुद्धि का दुःख है। आहाहा ! आहाहाहा !

यह `शुद्धनय एक ही भूतार्थ होने से' इसकी विशेष व्याख्या आयेगी।

(प्रमाण वचन गुरुदेव !)